[2015] 11 एस. सी. आर. 822

एल. आर. एस. द्वारा के. नंजप्पा (मृत)

बनाम

आर. ए. हमीद एलियास अमीरसाब (मृत) और

अन्य द्वारा एल. आर. एस

(2003 की सिविल अपील सं. 8224)

02 सितंबर, 2015

[एम. वाई. इकबाल और सी. नागप्पन, न्यायाधिपतिगण]

विशिष्ट राहत अधिनियम, 1963:

धारा 20- आयोजित होने का क्षेत्रः धारा 20 न्यायालय की विवेकाधीन शक्ति को संरक्षित करती है- तदनुसार विवेक का प्रयोग ठोस और उचित न्यायिक सिद्धांतों के साथ किया जाना चाहिए।

धारा 20- कागज की एक चौथाई शीट में लिखित समझौते का विशिष्ट निष्पादन -उच्च न्यायालय ने कहा एक आपराधिक कार्यवाही में समझौते के बाद से कागज की उक्त एक चौथाई शीट को मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया गया था की शुद्धता- अभिनिर्धारित किया: उच्च न्यायालय

दस्तावेज़ पर भरोसा करने में सही नहीं था हालांकि इसे एक चौथाई कागज की शीट पर निष्पादित किया गया था और उचित स्टाम्प पेपर पर नहीं किया गया था- उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए कि, वादी द्वारा दस्तावेज़ के निष्पादन के संबंध में पहले से ही विशेषज्ञ की जो राय मांगी जा चुकी थी उसकी कोई आवश्यकता नहीं थी, कानून में खुद को गलत तरीके से निर्देशित किया- एक आपराधिक कार्यवाही मामले में आपराधिक अदालतों द्वारा दर्ज किया गया साक्ष्य और निष्कर्ष कोई भी तथ्य के अस्तित्व विशेष रूप से, सिविल न्यायालय द्वारा अभिलिखित स्वतंत्र निष्कर्ष के बिना विशिष्ट निष्पादन के लिए एक डिक्री प्रदान करने के लिए समझौते के अस्तित्व का निर्णायक प्रमाण नहीं हो सकता है। यह एक उपयुक्त मामला नहीं है जहाँ विशिष्ट निष्पादन के लिए परिवादी-उत्तरदाता के पक्ष में विवेकाधीन राहत दी जानी है।

मौखिक अनुबंध- अनुबंध के विशिष्ट निष्पादन के लिए सूट-अभिर्धारित किया गयाः मौखिक अनुबंध के आधार पर निर्णय लिया जा सकता है हालाँकि, वादी पर यह साबित करने का भारी बोझ है कि वहाँ निष्कर्ष समझौता के लिए पक्षों के बीच सर्वसम्मति थी।

अपील को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने अभिर्धारित किया:

1. इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि एक डिक्री मौखिक अनुबंध के विशिष्ट निष्पादन के आधार पर भी प्रदान की जा सकती है। हालांकि,

एक मामले में जहां वादी एक मौखिक समझौता या लिखित अनुबंध के आधार पर अचल संपत्ति की बिक्री के अनुबंध के के विशिष्ट निष्पादन के लिए एक डिक्री की मांग करने के लिए आगे आता है तो, वादी यह साबित करने के लिए पर भारी बोझ पड़ता है कि अचल संपत्ति की बिक्री के लिए किए गए सम्पन्न समझौते के लिए पक्षों के बीच आम सहमति थी। क्या ऐसा कोई अनुबंध संपन्न हुआ था या नहीं, यह तथ्य का प्रश्न होगा जिसे प्रत्येक व्यक्तिगत मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में निर्धारित किया जाए। इसे वादी द्वारा स्थापित किया जाना है कि अचल संपत्ति की बिक्री के लिए पक्षों के बीच महत्वपूर्ण और मौलिक शर्तों का समझौता किया गया था। [पैरा 19,20] [842- सी-डी, एफ-जी]

2. एक अनुबंध के विशिष्ट निष्पादन के लिए एक मुकदमे में, न्यायालय को विशिष्ट राहत एक्ट की धारा 20 को ध्यान में रखना होगा। यह अनुबंध विशिष्ट निष्पादन के लिए डिक्री प्रदान करने के लिए न्यायिक विवेकाधिकार को संरक्षित करती है। हालांकि, केवल इसलिए क्योंकि ऐसा करना विधिसम्मत है, न्यायालय विशिष्ट निष्पादन प्रदान करने के लिए बाध्य नहीं है। न्यायालय को मामले के सभी तथ्यों और परिस्थितियों पर सावधानीपूर्वक विचार करना चाहिए और यह देखने के लिए कि न केवल वादी बल्कि प्रतिवादी द्वारा भी अनुचित लाभ लेने के लिए यह उत्पीड़न के साधन के रूप में उपयोग नहीं किया जाता है। यह समान रूप से अच्छी तरह से स्थापित किया गया है कि विशिष्ट निष्पादन की राहत विवेकाधीन

है और मनमाना नहीं है, इसलिए, विवेकाधिकार का प्रयोग ठोस और उचित रूप से न्यायिक सिद्धांत के अनुसार होना चाहिए। [अनुच्छेद 21,23] [842-एच; 843-ए-बी, एफ-जी]

3. तत्काल मामले में इस मुद्दे पर निर्णय लेते समय कि क्या रूप से प्रतिवादियों द्वारा कथित रूप से निष्पादित किये गये 1967 के समझौते को, लागू किया जा सकता है, अदालत को कथित समझौते को निष्पादित करने से पहले विभिन्न विसंगतियों और कानूनी प्रावधानों की श्रृंखला पर विचार करना पडा। दिनांकित 2.9.1967 समझौते में, पहले के समझौते की तारीख 29.11.1965 का संदर्भ है जिसके तहत प्रतिवादी-अपीलार्थी को रु 18,000/- का भुगतान किया गया था जिससे इनकार किया गया और विवादित था। यह बहुत ही दिलचस्प बात यह है कि वादी के मामले की पुष्टि करने के लिये समझौता दिनांकित 29.11.1965 को न तो दाखिल किया गया था और न ही प्रदर्शित किया गया था। उच्च न्यायालय ने कागज की एक चौथाई शीट में लिखे गए 2.9.1967 दिनांकित समझौते पर केवल इस तथ्य के कारण भरोसा किया क्योंकि एक आपराधिक कार्यवाही में मजिस्ट्रेट के सामने उक्त कागज की एक चौथाई शीट को प्रस्तुत किया गया था।। उच्च न्यायालय का यह मानना सही नहीं है कि दस्तावेज़ के निष्पादन पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है हालांकि इसे कागज की एक चौथाई शीट पर निष्पादित किया गया था औरन कि उचित स्टाम्प पर और एक छोटे से पत्र में भी लिखा गया था। उच्च न्यायालय ने भी

कानून में खुद को यह मानते हुए गलत तरीके से निर्देशित किया कि वादी ने दस्तावेज़ के निष्पादन के संबंध में एक विशेषज्ञ की राय मांगी थी उसकी कोई आवश्यकता नहीं थी। निर्विवाद रूप से, पूर्व में निष्पादन मामले सहित मुकदमा संपत्ति पर कब्जे के संबंध में वादी के दावे को रद्द करने के लिए पिछली कार्यवाही में आदेश-पत्र सहित विभिन्न दस्तावेज दायर किये गये थे, लेकिन इन दस्तावेजों पर नहीं उच्च न्यायालय द्वारा विचार किया गया है।किया गया। किसी आपराधिक कार्यवाही में आपराधिक अदालतों द्वारा दर्ज किये गये साक्ष्य और निष्कर्ष किसी भी तथ्य के अस्तित्व,विशेष रूप से, सिविल न्यायालय द्वारा अभिलिखित स्वतंत्र निष्कर्ष के बिना विशिष्ट निष्पादन के लिए एक डिक्री देने के लिए समझौते के अस्तित्व का निर्णायक प्रमाण नहीं हो सकते हैं। यह एक उपयुक्त मामला नहीं है जहां वादी- उत्तरदाता के पक्ष में विशिष्ट निष्पादन के लिए विवेकाधीन राहत दी जानी है। उच्च न्यायालय आलोच्य निर्णय में विशिष्ट राहत अधिनियम की धारा 20 के दायरे और इस न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून पर विचार करने में विफल रहा है। [पैरा 28,29,30] [847-डी-एच; 848-ए-डी]

सूर्य नारायण उपाध्याय बनाम राम रूप पांडे और अन्य 1995 पूरक (4) एस. सी. सी. 542; मयावंतीबनाम कौशल्या देवी 1990 (2) एस सी आर 350: (1990) 3 एस सी सी 1; के. प्रकाश बनाम बी. आर. संपत कुमार (2015) 1 एस. सी. सी. 597; जरीना सिद्दीकी बनाम ए. रामलिंगम 2015 (1) एस. सी. सी. 705-**पर भरोसा किया।**

अनिल बिहारी बनाम लतिका बाला डस्सी और अन्य ए. आई. आर. एस सी आर 863; शांति कुमार पांडा बनाम शकुंतला देवी 2003 (5) पूरक एस सी आर 98: (2004) 1 एससीसी 438; बिहार राज्य बनाम राधा कृष्ण सिंह और अन्य 1983 (2) एस सी आर 808: (1983) 3 एस. सी. सी. 118; कोइलीपारा श्रीरामुलु बनाम टी. अश्वथ नारायण ए. आई. आर. 1968 एस. सी. 1028: 1968 एस. सी. आर. 387- **संदर्भित किया गया।**

मामला कानून संदर्भ

1955 एससीआर 270	संदर्भित किया गया	पैरा 16
1971 (2) एससीआर 863	संदर्भित किया गया	पैरा 16
2003 (5) पूरक। एससीआर 98	संदर्भित किया गया	पैरा 16
1983 (2) एससीआर 808	संदर्भित किया गया	पैरा 16
1968 एससीआर 387	संदर्भित किया गया	पैरा 19
1995 पूरक (4) एस. सी. सी. 542	संदर्भित किया गया	पैरा 22

1990 (2) एससीआर 350	पर भरोसा किया	पैरा 24
(2015) 1 एस. सी. सी. 597	पर भरोसा किया	पैरा 25
2015 (1) एससीसी 705	पर भरोसा किया	पैरा 26

सिविल अपील न्यायनिर्णयः सिविल अपील संख्या 8224/2003

नियमित प्रथम अपील संख्याः कर्नाटक उच्च न्यायालय, बैंगलोर के 201/92 में दिनांकित 25.06.2003 के निर्णय और आदेश से।

के. राममूर्ति, निखिल स्वामी, प्रभा स्वामी....याचिकाकर्ताओं के लिये।

बसव प्रभु एस. पाटिल, बी. सुब्रह्मण्य प्रसाद, अनिरुद्ध, चिनमय देशपांडे, अमजिद मकबूद, एस. एन. भट, शीला गोयल.....उत्तरदाताओं के लिए।

न्यायालय का निर्णय **एम. वाई. इकबाल, न्यायाधिपति** द्वारा दिया गया था।

1. कर्नाटक उच्च न्यायालय द्वारा 1992 की नियमित प्रथम अपील सं. 201 में पारित निर्णय और आदेश दिनांकित 25.6.2003 से व्यथित होकर अपीलकर्ताओं ने विशेष अनुमति द्वारा इस अपील को दायर किया है। विवादित निर्णय के द्वारा, उच्च न्यायालय ने आंशिक रूप से अपील की

अनुमति दी, निचली अदालत के फैसले को दरकिनार कर दिया और वादी-उत्तरदाताओं के लिए विशिष्ट निष्पादन के लिए और यहाँ सूट आइटम I, II और III के कब्जे की वसूली के लिए मुकदमे का फैसला सुनाया।

2. जैसा कि इसके नीचे अदालती मुकदमे के फैसले से दिखाई देगी तथ्यात्मक पृष्ठभूमि को उजागर करने और पुनः प्रस्तुत करने की आवश्यकता है।

3. वादी-उतारदाता ने स्वर्गीय पी. अब्दुल रहिमान साब उर्फ जंबुसाब का पुत्र होने का दावा किया। स्वर्गीय जंबुसब की तीन पत्नियाँ थीं। पहली पत्नी का बेटा अब्दुल सकूरसब था जिनकी मृत्यु वर्ष 1967 में हुई थी। पहला वादी और उसका छोटा भाई आर. ए. रसीद जंबुसाब की दूसरी पत्नी अज़ीज़ाबी की संतान हैं। तीसरी पत्नी महाजम्बी के माध्यम से, जमूसब ने ए. अब्दुल सुभान, आर. अब्दुल मजीद, मकबल जान और अक्तरुन्निसा नामक 4 बच्चों को जन्म दिया था। स्वर्गीय जंबुसब के बच्चे स्वर्गीय जंबुसब की संपत्तियों को विभाजित करने के लिए सहमत नहीं हो सके। उन्होंने मुकदमा दायर किया और अंततः आर. ए. 133/49-50 में उच्च न्यायालय की फाइल में, एक अंतिम डिक्री पारित की गई और परिवाद की अनुसूची में वर्णित संपत्तियाँ पहले वादी और उसके छोटे भाई आर. ए. रशीद के संयुक्त हिस्से में आयी। फरमान की तारीख 22.08.1950 है। इस प्रकार सबसे पहले वादी और उसका छोटा भाई उच्च न्यायालय की डिक्री

दिनांक अर्थात् 22.08.1950 से सूट की अनुसूचित सम्पत्ति प्रकार अनन्य संयुक्त हिस्सेदार बन गए। सूट अनुसूची की पहली वस्तु जिसे सिनेमा भवन के रूप में डिजाइन किया गया था, को पहले संयुक्त रूप से वादी और उसके छोटे भाई आर. ए. रशीद द्वारा स्वर्गीय एन. के. सुब्बैया शेट्टी और एक रतनहल्ली रामप्पा को संयुक्त रूप से दिनांकित 26.02.1951 एक पंजीकृत पट्टा विलेख के माध्यम से जिसे 15 वर्ष की अवधि के लिए निर्दिष्ट किया गया था पट्टे पर दिया गया था। अन्य बातों के साथ-साथ शर्तों केअनुसार लीज के द्वारा 400 / रुपये के मासिक किराया प्राप्त किया जाना था जिसे वादी और आर. ए. रशीद को समान रूप से आधा-आधा भुगतान किया जाना था। पट्टेदारों को अग्रिम रूप से रु 10,000 /- लगसना था जिसे सूट अनुसूची के मद सं 1 की शुल्क के रूप में माना जाएगा। सभी उपकरण जैसे सिनेमा प्रोजेक्टर, विद्युत जनरेटर, फर्नीचर और अन्य सहायक उपकरण उक्त पट्टेदारों द्वारा खरीदे गए थे जो उन्हें अनुबंध के तहत प्रदान करना था और थिएटर को फिल्में दिखाने के लिए सुसज्जित किया गया था। पट्टे के तहत एक शब्द यह भी था कि पट्टे की समाप्ति पर ये उपकरण जैसे प्रोजेक्टर, जनरेटर आदि प्रथम वादी और उसका भाई आर. ए. रशीद की संपत्ति बननी चाहिए। जबकि केवल रु 5,000 /- अग्रिम राशि के रूप में दिया गया था, शेष रुपये 5,000 / की राशि का खर्च - जिसे एन. के. सुब्बैया शेट्टी और रतनहल्ली रामप्पा द्वारा अपने

पास रखा गया था, का हिसाब रखा गया और इस प्रकार केवल रु। 5000 /- की वास्तविक राशि अग्रइम राशि है।

4. लेकिन, एन. के. सुब्बैया शेट्टी और उनके संयुक्त किरायेदार रतनहल्ली रामप्पा जो चतुर व्यापारी थे, 2 जिन वर्षों में बाद में 2 जिन वर्षों में पाए गए कि वे लाभ कमाने के लिए थिएटर संपत्ति का प्रबंधन नहीं कर सके। उन दोनों ने अनुभवहीन प्रथम वादी को उनके साथ अनुबंध दिनांकित 05.08.1953 निष्पादित करने के लिये सफलतापूर्वक प्रेरित किया जो जाहिर तौर पर उनके अधिकारों का वादी प्रथम को एक उप-पट्टा प्रतीत होता है। यद्यपि, लीज की तारीख 26.02.1951 की शर्तों के अनुसार प्रथम वादी और उसका छोटा भाई सही रूप से सिनेमा थिएटर में उपकरणों के लिए का हकदार बन गये थी, वे पट्टे की समाप्ति पर उस का भुगतान करने के लिए किसी भी दायित्व के तहत भी नहीं थे। एन. के. सुब्बैया शेट्टी ने चतुराई से एक तथाकथित उप-पट्टा दिनांक 05.08.1953 में यह प्रावधान करवा लिया कि उसे अपने लिए रुपये250 / का किराया मिलना चाहिए जो कि वास्तव में रुपये 5000 / की अग्रिम राशि के लिए ब्याज के रूप में दिया जाता था, लेकिन जिसे एन. के. सुब्बैया शेट्टी ने उस समय पुनर्प्राप्त कर लिया था जब पट्टा अवधि उसके पक्ष में विद्यमान थी। इसके अलावा एन. के. सुब्बैया शेट्टी को कुछ भी भुगतान नहीं किया जाना था क्योंकि यह तथाकथित उप लीज द्वारा साक्ष्य को आसान बनाने के लिए स्वैच्छिक आत्मसमर्पण था। पर दिया।। रुपये 250 /- की प्रति माह

वापसी जो केवल रुपये5000 / की राशि पर ब्याज के रूप में मांगी जा सकती थी वह मैसूर में लागू सूदखोर ऋण अधिनियम था। इस प्रकार प्रतिफल के अभाव में तथाकथित उप पट्टा दिनांकित 05.08.1953 अवैध था। चूंकि रु 5000 /- पर कानूनी रूप से दावा नहीं किया जा सकता था क्योंकि इसे पुनर्प्राप्त कर लिया गया था और एन. के. सुब्बैया शेट्टी को प्रतिमाह रु. 250 /- के भुगतान के प्रावधान भी सूदखोर ब्याज होने के नाते भी कानून में वसूली योग्य नहीं थे। तथाकथित पट्टा दिनांकित 05.08.1953 केवल एक समर्पण के रूप में कानून में संचालित पट्टा था, जैसा कि पट्टेदार और पट्टेदाता की लड़ाई का T.P.Act की धारा 111 (d) के तहत अनुसूची की वस्तु संख्या-1 के अंतर्गत विलय हो गया थ। वह अपने स्वयं के भवन का उप-पट्टा धारक नहीं हो सकता था और उप-पट्टा इस हद तक शून्य था कि इसने एन. के. सुब्बैया शेट्टी को किराया के रूप में भुगतान करने के लिए रु.250/- प्रदान किया था, इसलिये वह अधिकार जो दिनांकित 05.08.1953 विलेख के निष्पादन पर वादी को अर्जित हुआ थाथा वह. इस कारण से, सुब्बैया शेट्टी किसी भी प्रकार का भुगतान करने के दायित्व से मुक्त था। आर. ए. रशीद, प्रथम वादी के भाई ने सी. सम्भूलिंगईया जो कि प्रतह्म बचावकर्ता था, के नाम पर के नाम पर 24.01.1953 बेनामी दिनांकित एक उच्चारण निष्पादित किया। प्रतिवादी ने ओ. एस. 1/54 में सी. सम्भूलिंगईया का पावर ऑफ अटॉर्नी के धारक के रूप में आर. ए. रशीद के खिलाफ उस समय उप-न्यायाधीश, मांड्या का

न्यायालय में मुकदमा दायर किया और एकतरफा आदेश प्राप्त किया और निष्पादन संख्या 38/54 में सूट अनुसूची में संलग्न पहली वस्तु के अनुसार आर. ए. रशीद का अविभाजित आधा हिस्सा मिला। इसके बाद, प्रदर्श 5/56 में प्रथम प्रतिवादी वकील की शक्ति के धारक के रूप में आगे के निष्पादन के लिये मुकदमा दायर किया और आर. ए. रशीद का आधा हिस्सा बिक्री के लिए लाया गया और उसी आधे हिस्से को 12.07.1956 को आयोजित न्यायालय की नीलामी में सी. सम्भूलिंगईया के नाम से बोली की राशि रु 8359.37 में खरीदा। हालांकि, पट्टे के आधे हिस्से की कीमत ही एक लाख रुपये थी, स्वयं आर. ए. रशीद को पूरे समय अंधेरे में रखा गया था क्योंकि सभी प्रक्रियाओं की सेवाओं को ऐसे प्रदर्शित किया गया था मानो आर.ए. रशीद ने उन्हें मना कर दिया था। पर फिर से शंभुलिंगैया के के नाम पर, जो प्रथम प्रतिवादी डिलीवरी का बहनोई था, पर मुकदमा चलाया गया था और चूंकि वास्तविक डिलीवरी आर. ए. रशीद के अविभाजित आधे हिस्से से प्राप्त नहीं हो सकी थी, रसीद ने 02.04.1958 के 34/56 विविध में उक्त आधे हिस्से की प्रतीकात्मक डिलीवरी लेने के लिए प्रथम प्रतिवादी ने पैंतरेबाज़ी की। इसके बाद, प्रथम प्रतिवादी ने दूसरे प्रतिवादी, प्रथम प्रतिवादी की पत्नी, अमृतम्मा के नाम पर सी शंभुलिंगैया द्वारा एक बिक्री विलेख निष्पादित करने की व्यवस्था की। इस विलेख के लिए कोई प्रतिफल का भुगतान नहीं किया गया। इसका अर्थ है कि

प्रतिनिधि, एक बेनामीदार का दूसरे के लिए प्रतिस्थापन, जिसका द्देश्य है कि संपत्तियां पहले प्रतिवादी के पास उसकी पत्नी का नाम पर रहनी चाहिए।

5. पहले वादी ने एक कृष्ण शास्त्री, जो पहले प्रतिवादी के लिए बेनामीदार भी थे, के नाम पर दिनांकित 10.05.1952 को रु. 1335/- का एक मांग नोट निष्पादित किया था। यह पता चला है कि मुनिसिफ, श्रीरंगपटना, की फाइल पर 1953 के ओ.एस. 449 में एक मुकदमा दायर किया गया था, और इस प्रथम वादी को उक्त कार्यवाही से अनजान रखते हुए समन पर इनकार का समर्थन प्राप्त किया गया था। प्रथम प्रतिवादी को वादी की पीठ के पीछे एक एक-पक्षीय डिक्री मिल गई। यह पता चला है कि उक्त डिक्री को प्रथम प्रतिवादी के नाम पर स्थानांतरित कर दिया गया था और प्रथम प्रतिवादी ने मुन्सिफ, श्रीरंगपटनम की फाइल पर प्रदर्श संख्या 217/61 में निष्पादन का मुकदमा दायर किया था और वाद की अनुसूची आइटम 1 से 3 में प्रथम वादी का आधा हिस्सा संलग्न किया गया।बेशक, न्यायालय की सभी प्रक्रियाएँ प्रथम प्रतिवादी जिसके पास अदालत के काम में व्यापक अनुभव है, के द्वारा गुप्त रूप से की गई थीं, और पहला वादी इसके बारे में पूरी तरह से अनजान था। कुर्की के बाद, पहले प्रतिवादी ने एन. के. सुब्रमण्य शेट्टी को अपना नाम उधार देने के लिए प्रेरित किया, इस प्रकार ओ.एस. 449/52 में डिक्री के अपने भाई एन. के. सुब्बैया शेट्टी के संदेश के साथ एन. के. सुब्रमण्य के नाम एक कार्य सौंपा। यह फिर से बहु करोदपति एन. के. सुब्बैया शेट्टी को खुश

करने के लिए बिना किसी विचार के किया गया था खुद चिंतित थे और अवैध लाभ में हिस्सेदारी प्राप्त करने के लिए उत्सुक थे। यह पता चला है कि प्रथम प्रतिवादी को, हालांकि, एन. के. सुब्बैया शेट्टी पॉवर ऑफ अटॉर्नी की एक सामान्य शक्ति मिल गई थी और सुब्बैया शेट्टी ने इन तथ्यों को छुपाते हुए निष्पादन कार्यवाही जारी रखी कि पहले वादी का केवल आधा हिस्सा आईटम 1 से 3 में पहले प्रतिवादी का कम से कम में रु. 1,50,000 /- के मूल्य का केवल आधा हिस्स ही बिक्री के लिए लाया जा सका। प्रथम प्रतिवादी ने सम्पूर्ण अनुसूची वस्तु को बिक्री के लिए रखा और 14.02.1962 को 325 रुपये की मामूली राशि के लिए न्यायालय की नीलामी में बोली लगाई। इस प्रकार प्रथम प्रतिवादी की पीठ पर छुरा भोंका और 06.04.1962 पर इसकी पुष्टि करवायी गई। बिक्री और उसके बाद की पुष्टि दूषित और अमान्य है क्योंकि केवल आधा हिस्सा ही संलग्न किया गया था, , लेकिन कुर्की के खिलाफ ही उन संपत्तियों सहित जो कुर्की का विषय नहीं थीं पूर्ण संपत्तियों को बिक्री के लिए लाया गया और खरीदा गया।

6. चूंकि पहले प्रतिवादी ने खुले तौर पर दावा किया था कि वह वास्तव में पहले वादी की पूरी संपत्तियों का मालिक बन गया है, पहले वादी ने पूछताछ की और प्रक्रियाओं के दुरुपयोग के माध्यम से प्रथम प्रतिवादी के विश्वासघाती और अवैध कृत्यों के बारे पता चला जिसने अदालत की प्रक्रियाओं के दुरुपयोग के माध्यम से पहले वादी के आधे हिस्से सहित

बिक्री आयोजित करवाने की चालबाजी की, और धोखाधड़ी के आधार पर बिक्री को निरस्त कराने के लिए 1962 का विविध संख्या 49 दायर किया। एक लंबी मुकदमेबाजी चल रही थी जो एक समझौता याचिका दिनांक 17.02.1966 दायर करने के बाद समाप्त हुई में समाप्त हुई जिसके द्वारा पहला वादी समझौते की दिनांक से तीन महीने के भीतर रुपये .7000/- का भुगतान करने पर सहमत हो गया और यदि ऐसा भुगतान समय के भीतर किया गया था तो याचिका स्वीकार कर ली जायेगी और विफल रहने होने पर याचिका निरस्त कर दी जायेगी। इसके बाद पहले वादी ने 3 किश्तें में राशि का भुगतान किया। पहली किस्त रुपये 2000/- है, कुल मिलाकर रुपये 7000/- समझौता याचिका के अनुसार तीन महीने के भीतर, पहले प्रतिवादी को दिये जायेंगे। के वकील को दिये जायेंगे। प्रथम प्रतिवादी ने अपने वकील को उपरोक्त भुगतान की प्राप्ति की बात 10.05.1966 दिनांकित पत्र में प्रथम वादी को लिखे गए पत्र में और फिर उसे उपरोक्त भुगतानों की प्राप्ति को स्वीकार की हैऔर फिर पहले प्रतिवादी द्वारा प्रथम वादी को दिनांक 31.07.1967 को लिखे एक अन्य पत्र में स्वीकार की है। हालांकि, यह पता चला है कि पहले प्रतिवादी ने विश्वासघात पूर्वक पूरी तरह से प्राप्त किए भुगतान की सूचना न्यायालय को करवाये बिना गुप्त इरादों के साथ मौन धारण बनाये रखा। इसके अलावा, पहला प्रतिवादी जिसे अब्दुल रशीद का आधा हिस्सा मिला था, ने अपनी पत्नी अमृतम्मा के नाम पर बेनामी सम्पत्ति हस्तांतरित करवादी, दूसरे

प्रतिवादी ने29.11.1965 को पहले वादी की पत्नी के साथ एक समझौता किया जिसे प्रतिवादी ने वकील की शक्ति के धारकके रूप में निष्पादित किया जिससे द्वितीय प्रतिवादी धाराक जिसके द्वारा वह 18, 000/- रुपये की राशि के लिए आधा हिस्सा और दूसरा घर देने पर सहमति हुआ, जिसे सूट अनुसूची में चौथी वस्तु के रूप में वर्णित किया गया है, इस समझौते के लिए रुपये18,000/- का भुगतान किया गया है। पर विचार किया गया है। इस समझौते के प्रतिफल के रूप में द्वितीय वादी की ओर से प्रथम वादी द्वारा 18, 000/- रुपये का निम्नलिखित रूप में भुगतान किया गयाः

(क) दिनांकित 29.11. 1965 के समझौते के अनुसारः जैसा कि स्वीकार किया है प्रथम प्रतिवादी को रुपये 8000/- का भुगतान किया गया है। उसमें स्वीकार किया गया है।

(ख) प्रथम प्रतिवादी द्वारा दिनांक 09.02.1966 को निष्पादित रसीद के अनुसार, रुपये 5500/- का भुगतान किया गया है इस प्रकार कुल रुपये 18,000/- में से रुपये 13,500/- का भुगतान किया जा चुका है।

7. इसके बाद, पहले प्रतिवादी ने स्वयं के लिये और द्वितीय प्रतिवादी और एन. के. सुब्रमण्य शेट्टी दोनों के वकील की शक्ति के धारक के रूप में दिनांकित 02.09.1967 को एक अलग बिक्री विलेख द्वारा1 सूट अनुसूची की पूरी वस्तु और सूट अनुसूची का आइटम 2 (गोलीगारा में घर), और आइटम 3 भूमि और वस्तु 4 घर के लिये रुपये 25,000/- का एक नया

समझौता निष्पादित करने का आरोप लगाया गया जिसका पूरी तरह से रूप से निम्नलिखित विवरण के अनुसार भुगतान किया गया था:

(क) प्रथम प्रतिवादी को रुपये 7000/- भुगतान किया गया जैसा कि पैरा 9 में उल्लिखित है और 10.05.1966 और 31.07.1967 दिनांकित पत्रों में स्वीकार किया गया।

(ख) रुपये 4500/- का भुगतान गवाहों के सामने 02.09.1967 को किया गया जब समझौते को लागू किया गया।

(ग)- दिनांकित 29.11.1965 के समझौते के अनुसार प्रथम प्रतिवादी को रु. 8000 / का भुगतान किया गया।

(घ) तारीख 9.2.1966 की रसीद के अनुसार रु. 5500/- का भुगतान किया गया जिसमें उपरोक्त (ए) के अनुसार रु. 8000/- की राशि भी स्वीकार की गई।

8. पहला वादी कथित रूप से पूरे समय एक सूट अनुसूची का आइटम नंबर 1 सिनेमा थिएटर चला रहा है, क्योंकिउस पर 01.08.1953 के बाद से उसी का कब्जा। हालांकि, 05.09.1967 की सुबह पहले वादी को अपने बेटों और दूसरे पाशा, एक रिश्तेदार के साथ खुद को गिरफ्तार पुलिस अधिकारियों द्वारा पाये जाने पर, आश्चर्य हुआ। पता चला है कि पहले प्रतिवादी ने पुलिस में शिकायत दर्ज कराई थी कि उसे सूट अनुसूची की मद संख्या 1 सिनेमा भवन से बेदखल कर दिया गया था जबकि उनके

पास कोई अधिकार नहीं था। प्रथम वादी के सिनेमा भवन का हिस्सा बनने वाली लेखा पुस्तकें और अन्य महत्वपूर्ण कागजात और कई सामग्रियां थीं जिन्हें सूट अनुसूची के मद संख्या 1 के परिसर के भीतर रखा गया था। पहला प्रतिवादी जिसके साथ के. एन. सुब्रमण्य शेट्टी और एन. के. सुब्बैया शेट्टी ने पुलिस की मद से मिलीभगत करके प्रथम वादी को सिनेमा उपकरण, फर्नीचर आदि के साथ सूट अनुसूची 1 के आईटम संख्या 1 से बेदखल कर दिया। कागजों में अन्य के साथ साथ वादी द्वारा समय-समय पर भुगतान किए गए धन के लिए प्रतिवादी नं. 1और एन. के. सुब्बैया शेट्टी द्वारा निष्पादित अन्य रसीदें शामिल थीं और लेखा पुस्तकों में इस भुगतान के सम्बंध में प्रविष्टियाँ होती थीं। इस प्रकार, प्रथम और एन. के. सुब्बैया शेट्टी, मूल्यवान साक्ष्य पर अपना हाथ रखने में सफल रहे और यह माना जाता है कि पुलिस द्वारा बल का प्रदर्शन और बाद में प्रथम वादी को मद संख्या 1 से बेदखल करने में सफल हो गये इन मूल्यवान अभिलेखों को अपनी हिरासत में लेने के लिए पैंतरेबाज़ी की गई। यहाँ तक कि पुलिस को मद संख्या 1 में उनके जबरन प्रवेश के समय लिखित महज़र भी नही मिला। पहले प्रतिवादी की शिकायत सी. सी. 1758/67 और सी. सी. 370/68 विशेष प्रथम श्रेणी दंडाधिकारी श्रीरंगपटना के समक्ष विषय वस्तु बन गई और उपरोक्त मामलों में शिकायतकर्ता और अभियुक्त दोनों को ही दोषमुक्त कर दिया गया था। निष्कर्ष यह है कि सिविल न्यायालय में प्रथम प्रतिवादी द्वारा ली गई तथाकथित डिलीवरी केवल एक

कागजी डिलीवरी है और प्रतिवादी को सूट अनुसूची की पहली मद से बेदखल करने के लिए नहीं मजिस्ट्रेट ने पहले थिएटर के लिये ताले की चाबी वापस करने का भी निर्देश दिया जिसे पहले वादी को अवैध जब्ती के समय पुलिस द्वारा रखा गया था। यह वास्तविक अधिकार का प्रतीकात्मक वितरण था जिसके लिए प्रथम वादी कानूनी रूप से हकदार था। प्रथम वादी ने निर्णय के अनुसरण में विशेष प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट, श्रीरंगपटना के समक्ष वास्तविक कब्जे के लिए एक आवेदन दायर किया है, जो लंबित था। वादियों ने इस मुकदमे में उनकी अवैध गिरफ्तारी और उनके लेखों और खाता पुस्तकों और कागजात की गडबडी के कारण हुए नुकसान के दावे को भी शामिल किया गया है, और साथ ही 05.09. 1967 को हुई बेदखली के कारण अर्जित होने वाला लाभ भी शामिल किया है। चूंकि प्रतिवादी सं 1 और 2 और एन. के. सुब्रमण्य शेट्टी 02.09.67 के समझौते की शर्तों के अनुसार एक बिक्री विलेख निष्पादित करने में विफल रहे, जो पहले प्रथम प्रतिवादी द्वारा स्वयं के लिये और अपने लिए और प्रतिवादी नं 2 और एन. के. सुब्रमण्य शेट्टी की ओर से सूट अनुसूची का मद संख्या 1 के अनुसार दर्ज किया गया था, अनुबंध दिनांकित 05.09.67 के विशिष्ट प्रदर्शन के लिए मुकदमा दायर किया गया था। जैसा कि प्रथम वादी द्वारा विशेष प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट, श्रीरंगपटना, के समक्ष आपराधिक मामलों में कुछ दस्तावेजों को प्रस्तुत किया गया है, उसी की प्रमाणित प्रतियां शिकायतकर्ता की अभिरक्षा में मूल दस्तावेजों के साथ दस्तावेज़ सूची सहित

तीन प्रतियों में इस न्यायालय के अवलोकन के लिए प्रस्तुत किया गया। एन. के. सुब्बैया शेट्टी को शामिल किया गया है ताकि उसके खिलाफ भी एक बाध्यकारी डिक्री दी जा सके।

9. विचारण न्यायालय ने सुनवाई के लिये निम्नलिखित मुद्दों को तैयार किया:

1) क्या पहला प्रतिवादी दूसरे प्रतिवादी का पावर ऑफ अटॉर्नी धारक था?

2) क्या प्रथम प्रतिवादी ने अपने लिए और दूसरे प्रतिवादी के वकील की शक्ति के धारक के रूप में तारीख 2.9.1967 को एक विक्रय समझौते को निष्पादित किया जिसमें वादी के पक्ष में शिकायत अनुसूचित संपत्तियाँ को व्यक्त करने के लिए सहमति हुई थी?

3) क्या उक्त समझौते के तहत वादी ने प्रथम प्रतिवादी को अभियोग पत्र के पैरा 11 (क) (ख) (ग) (घ) में उल्लिखित राशि का भुगतान किया था?

4) क्या वादी विक्रय समझौते और अनुसूची संपत्तियों का कब्जा प्राप्त करने के लिये विशिष्ट निष्पादन के हकदार हैं?

5) क्या वादी पिछले मुनाफे के तौर पर रुपये 93,600/ के हकदार हैं?

6) (क) क्या प्रदर्श संख्या 217/61 और विविध संख्या 34/69 में कार्यवाही और उस पर आदेश धोखाधड़ी वाले हैं और अधिकार क्षेत्र के बिना हैं और इस तरह वे शून्य, अवैध और गलत है जैसा कि शिकायत के पैरा ¼ में कहा गया है?

(ख) क्या प्रतिवादियों को शिकायत के पैरा 16 में उल्लिखित कारणों से उनके आचरण के द्वारा उनके द्वारा दिनांकित 2.9.67 मुकदमे के समझौते को चुनौती देने से रोका गया है?

(ग) क्या वादी यह साबित करते हैं कि वे दिनांकित 2.9.1967 समझौते के अनुसार बिक्री के अनुबंध के अपने हिस्से का प्रदर्शन करने के लिए तैयार हैं?

(7) क्या प्रतिवादी सी. पी. सी. की धारा 35 (ए) के तहत क्षतिपूर्ति लागत के हकदार हैं?

(8) पक्ष किस राहत के हकदार हैं?

अंक संख्या 1 का जवाब सकारात्मक रूप से यह अभिनिर्धारित करते हुए दिया गया है कि प्रतिवादी-अपीलार्थी सं। 1 अपनी पत्नी प्रतिवादी नं. 2 का पी. ओ. ए. धारक था।

10. निर्गम संख्या 2-4 साथ में तय करते समय, ट्रायल कोर्ट इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि वादी-प्रतिवादी यह साबित करने में विफल रहा कि 2.9.1967 दिनांकित बिक्री का समझौता प्रतिवादियों अपीलार्थी द्वारा

निष्पादित किया गया था और, इसलिए, बेचने के लिए समझौते का विशिष्ट प्रदर्शन के हकदार हो गए। मुद्दों को तय करने में यह तर्क दिया गया है अन्य बातों के साथ-साथकि कथित समझौता छोटे अक्षरों में लिखे एक चौथाई कागज में निष्पादित किया गया था।। प्रदर्श पी. 1 समझौते को लिखने के लिए कागज के एक छोटे से टुकड़े का उपयोग क्योंकिया गया था इसका कोई कारण नहीं बताया गया है। विचारण न्यायालय द्वारा किए गए निष्कर्ष का प्रासंगिक भाग निम्नानुसार निकाला जा सकता है:

> "यदि हम दस्तावेज़ को सावधानीपूर्वक देखते हैं तो प्रदर्श 4 पर यह स्पष्ट रूप से उल्लिखित है कि प्रतिवादी 1 ने दूसरा प्रतिवादी के वकील की शक्ति के रूप में और सुब्रमण्य शेट्टी ने 4,500/- रुपये लेने के बाद पहले और दूसरे वादी के पक्ष में प्रदर्श पी. 1 निष्पादित किया यह दस्तावेज़ बहुत पुराने क्वार्टर शीट कागज का टुकड़ा पर लिखे गए हैं जो बहुत छोटे अक्षरों में लिखा गया है। प्रदर्श पी. 1 सामान्य अनुक्रम में बिल्कुल भी नहीं लिखा गया है। पीडब्लू 1,2 और 5 के साक्ष्य में कोई कारण नहीं बताया गया है कि प्रदर्श पी. 1 लिखने के लिए कागज का एक छोटा टुकड़ा क्यों उपयोग किया जाता है। प्रदर्श पी. 1 मैसूर जैसे नगर में लिखा जाता है। यह एक दूरदराज के छोटे से गाँव में नहीं लिखा गया है, जिसमें कागज की कमी की उम्मीद की जा

सकती है। यहाँ यह ध्यान देना और भी प्रासंगिक है कि पहले प्रतिवादी की दुकान का परिसर संथेपेट में स्थित था जो देवराज बाजार और श्रीरामपेट के बहुत करीब है,, जो मैसूर के व्यापार केंद्र का केंद्र हैं। इसके अलावा, प्रदर्श पी. 1 को दोपहर का समय से पहले लिखा जाता है, पी. डब्ल्यू. 1 ने कहा है कि उन्होंने प्रदर्श पी. 1 को सुबह 9 बजे से 1 बजे के बीच लिखा है। इसके अलावा पी. डब्ल्यू. 5 ने लगभग 2-30 अपराह्न पूर्व तक कहा है, पी. 1 लिखा गया है, पी. डब्ल्यू. 2 ने कहा है कि दोपहर 12 बजे तक प्रदर्श पी. 1 लिखा जाता है, जिसका अर्थ है कि प्रदर्श पी. 1 दिन का एक व्यापक प्रकाश में लिखा गया है। यदि प्रदर्श पी. 1 में निहित लिखावट छोटे अक्षरों में है तो इस लिखावट को लिखने के लिए कम से कम कागजों की दो पूरी शीटों कवर किया जा सकता है, जिसका अर्थ है कि यह पहाड़ी आकार के कागजों के 4 पृष्ठ तक कवर कर सकता है। इसका कोई कारण नहीं बताया गया है कि प्रदर्श पी. 1 को इतने संकुचित तरीके से क्यों लिखा गया है। मैसूर शहर में प्रदर्श पी. 1 लिखने के लिए कागज की अनुपलब्धता बिल्कुल भी अपेक्षित नहीं हो सकती है और न ही प्रत्याशित, वह भी प्रथम प्रतिवादी की दुकान के निकट मैसूर नगर के जो

व्यापार केंद्र में है।। सभी गवाहों द्वारा यह स्वीकार किया गया है कि डाक टिकट विक्रेताओं की कई दुकानें और अधिवक्ताओं के कार्यालय हैं। अगर ऐसा मामला होता तो प्रदर्श पी. 1 लिखने के लिए आवश्यक कागज को प्राप्त करने में कोई कठिनाई नहीं होती। इसके अलावा, अगर हम प्रदर्श पी. 1 की सामग्री को ध्यान से देखें, तो यह पता चलता है कि सभी सूट संपत्तियों को रु. 25,000 / मेंबेचने पर सहमति हुई है और प्रतिवादी को रु. 20,500/- की राशि का भुगतान 02-09-67 से पहले तक कर दिया गया है। इसके अलावा, यह भी स्पष्ट है कि 4,500/- रुपये की राशि भी प्रतिवादी1 को दी गई थी। इसका मतलब है कि पंजीकृत बिक्री विलेख प्राप्त करने के लिए केवल स्टाम्प पेपर प्राप्त करना आवश्यक था। वादी के किसी भी गवाह को कोई कारण नहीं बताया गया कि पंजीकरण निष्पादित करने के लिए स्टाम्प पेपर खरीदने में क्या कठिनाई हुई। प्रदर्श पी. 1 में उल्लिखित बिक्री के संबंध में बिक्री विलेख। वादी का मामला यह नहीं है कि वे धन की कमी के कारण प्रदर्श पी. 1की तिथि पर आवश्यक स्टाम्प पेपर खरीदने में असमर्थ थे। अगर यह वास्तव में एक वास्तविक बिक्री थी या न्यायालय के समक्ष चित्रित करने का प्रयास किया गया था,

तो निश्चित रूप से इसके सम्बंध में बिक्री विलेख स्वयं निष्पादित कर दिया गया होगा क्योंकि पहले प्रतिवादी को उप-पंजीयक के समक्ष प्रकट होने के अलावा अलावा कुछ और करने के लिए की आवश्यकता नहीं है, बल्कि पंजीकृत विक्रय विलेख पर हस्ताक्षर करने थे, और यदि बिक्री वास्तव में एक वास्तविक बिक्री थी, तो वादी को प्रथम प्रतिवादी को उप-पंजीयक के कार्यालय में ले जाने और संबंधित उप-पंजीयक पांडवपुरा के कार्यालय में पंजीकृत दस्तावेज़ को निष्पादित कराने से कोई भी नहीं रोक सकता था लेकिन इस बारे में कोई कारण नहीं बताया गया कि पंजीकृत बिक्री विलेख प्रथम प्रतिवादी से निष्पादित क्यों नहीं किया गया है, जो स्वीकृत रूप से प्रथम प्रतिवादी और सुब्रमण्य शेट्टी, जो 02-09-67 को सूट अनुसूची सम्पत्तियों के मालिक थे, की जनरल पावर ऑफ अटॉर्नी का धारक है। इसके अलावा, यह प्रासंगिक है कि हालांकि प्रदर्श पी. 1 में यह उल्लेख किया गया है कि वादी को स्टाम्प पेपर खरीदने की राशि और पंजीकरण शुल्क आदि के सम्बंध में कुछ व्यवस्था करने की आवश्यकता थी, लेकिन किसी भी गवाह पी. डब्ल्यू. 1, 2 और 5 मामले के इस पहलू के बारे में नहीं बताते हैं।"

11. प्रतिफल राशि के भुगतान के प्रश्न पर, निचली अदालत ने प्रतिवादियों के खिलाफ फैसला सुनाया। अंत में, निचली अदालत ने फैसला सुनाया कि चूंकि मुद्दा संख्या 2 से 4 वादीगण के खिलाफ निर्णय लिया जा चुका है, विशिष्ट निष्पादन के लिए राहत प्रदान नहीं किया जा सकता है।

12. उच्च न्यायालय ने पहला अपीलीय न्यायालय होने के नाते, साक्ष्य की पुनः सराहना की और इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि निचली अदालत द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्ष कानून की दृष्टि से विकृत हैं। अपीलार्थी अदालत ने पी. डब्ल्यू.-1 के साक्ष्य पर चर्चा की, दस्तावेज़ का लेखक, जिसने दर्शाया कि समझौता अपीलार्थी संख्या 1 द्वारा दिए गए निर्देशों के अनुसार लिखा गया था और उक्त दस्तावेज़ पर उनके हस्ताक्षर थे। अपीलीय अदालत ने अन्य पीडब्लू के साक्ष्य पर चर्चा की जिन्होंने इसे प्रमाणित किया है। अपीलीय अदालत ने आगे पाया कि एक आपराधिक मामले में पक्षों के बीच कार्यवाही करते हुए गवाह ने साक्ष्य दिया और अनुबंध प्रदर्श पी. 1 प्रस्तुत किया जिसके द्वारा आपराधिक न्यायालय प्रदर्श डी. के रूप में चिह्नित किया गया था।

13. अपीलीय न्यायालय ने आपराधिक न्यायालय द्वारा दर्ज किये गये साक्ष्य और निर्णय की प्रासंगिकता पर विचार किया और निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गयाः

" 17. इसके निष्पादन आदि के संबंध में दस्तावेज़ प्रदर्श पी. 1 के सम्बंध में आपराधिक न्यायालय द्वारा इस संबंध में निकाला गया निष्कर्ष निश्चित रूप से प्रासंगिक है और वादी द्वारा अपने मामले के समर्थन में सक्रिय साक्ष्य के एक टुकड़े के रूप में इस पर भरोसा किया जा सकता है। अपने निर्णय प्रदर्श पी.4 में समझौते प्रदर्श पी. 1 का निष्पादन के संबंध में आपराधिक न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियां प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा दस्तावेज़ प्रदर्श पी. 1 के निष्पादन के संबंध में वादीगण के दावे के समर्थन में भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 13 के अंतर्गत निश्चित रूप से स्वीकार्य है। इसलिए, विचारण न्यायालय इस आधार पर कि अपराधी न्यायालय का निर्णय सिविल न्यायालय पर बाध्यकारी नहीं है इस तरह साक्ष्य की उपेक्षा करने में बिल्कुल भी उचित नहीं था। हो सकता है किआपराधिक न्यायालय का निर्णय सिविल अदालत पर बाध्यकारी नहीं है। लेकिन, किसी दस्तावेज़ के संदर्भ में एक सक्षम न्यायालय द्वारा की गई टिप्प्पणियाँ दीवानी मामले में भी निश्चित रूप से प्रासंगिक होगा, जहां एकमात्र वही दस्तावेज ही चुनौती का विषय था।"

18. तत्काल मामले में, यह विवाद में नहीं है कि एकमात्र वही दस्तावेज़ प्रदर्श पी. 1 आपराधिक न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया था जिसमें, वादी संख्या 1 पर अतिचार का आरोप लगाया गया था और आपराधिक न्यायालय ने उक्त दस्तावेज़ की जांच करने के बाद ऐसे दस्तावेज़ के संदर्भ में कुछ टिप्पणियां की हैं और ऐसा होने पर, जब वही दस्तावेज़ पर एक दीवानी मामले में पूछताछ की मांग की, तो आपराधिक न्यायालय की टिप्पणियाँ निश्चित रूप से प्रासंगिक होंगी। वास्तव में, उत्तरदाताओं के लिए विद्वान वकील ने इस तर्क को आगे बढ़ाया था कि यह दस्तावेज़ आपराधिक मामले में बचाव के उद्देश्य से बनाया गया था / कूटरचित किया गया था। उत्तरदाताओं की ओर से उठाए गए इस तरह के विवाद को देखते हुए, आपराधिक न्यायालय द्वारा अपने निर्णय में दस्तावेज प्रदर्श पी. 4 के संदर्भ में की गई टिप्पणियाँ निश्चित रूप से वर्तमान मामले में प्रासंगिक होगी। आपराधिक न्यायालय द्वारा दस्तावेज़ प्रदर्श पी. 1 के निष्पादन के संबंध में अपने निर्णय प्रदर्श पी. 4 में की गई टिप्पणियाँ पीडब्लूएस 1,2 और 5. के साक्ष्य को विश्वास दिलाती हैं। वहाँ कोई गंभीर विवाद नहीं हो सकता है कि वादी सूट संपत्तियों के मूल मालिक थे और वही मुकदमे की एक श्रृंखला में खो दिया और अंततः उक्त संपत्तियां जो कभी वादी के हाथों खो गए थे, उन्हें इस समझौते प्रदर्श पी. 1 के आधार पर वादी को फिर से सुपुर्द करने की मांग की गई थी, जो प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा उनके पक्ष में निष्पादित किया गया। परिस्थितियों के तहत,

दस्तावेज़ प्रदर्श पी. 1 के वादी के पक्ष में निष्पादन पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि इसे एक चौथाई कागज पर निष्पादित किया गया था और एक उचित स्टाम्प पेपर पर नहीं किया गया था और आगे दस्तावेज़ प्रदर्श पी. 1 पर सामग्री को छोटे अक्षरों में लिखा गया है। लेकिन फिर यह नहीं कहा जा सकता है कि यह कोई दस्तावेज नहीं है। इसे इंगित करना पड़ता है कि दस्तावेज़ को भारतीय साक्ष्य अधिनियम के तहत परिभाषित किया गया है और इसका अर्थ है, "व्यक्त किया गया या अक्षरों, आकृतियों के माध्यम से किसी भी पदार्थ पर वर्णित कोई भी मामला या निशान या उन साधनों में से एक से अधिक का उपयोग करने का इरादा है या जिसका उपयोग वह बात रिकॉर्डिंग के उद्देश्य से किया जा सकता है"। लेखन एक दस्तावेज है, चाहे लेखन एक चौथाई शीट या कागज या एक पूर्ण शीट पर बनाया गया हो, यह साक्ष्य अधिनियम के अर्थ के भीतर एक दस्तावेज़ हैऔर वह सिर्फ इसलिए कि लेखन एक चौथाई कागज पर है, यह एक दस्तावेज बनना बंद नहीं करता है। एकमात्र आवश्यकता यह है कि किसी दस्तावेज़ पर भरोसा करने वाले पक्ष को कानून के अनुसार इसे साबित करना होगा। किसी दस्तावेज़ के बारे में सामग्री को साबित करने का तरीका भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 61 से 66 में वर्णित किया गया है। दस्तावेज़ की सामग्री प्राथमिक या द्वितीयक साक्ष्य द्वारा सिद्ध हो सकती है। प्राथमिक साक्ष्य का अर्थ है, जो स्वयं दस्तावेज़ न्यायालय का निरीक्षण के लिए प्रस्तुत किया गया है।

तत्काल मामले में, यह विवाद नहीं है कि स्वयं मूल समझौता प्रदर्श पी. 1 के अनुसार न्यायालय के निरीक्षण के लिए प्रस्तुत किया गया था। प्रश्नगत दस्तावेज़ की, बिक्री का समझौता या पुनर्भरण होने का सक़्मझौता होने के कारण, सत्यापन की आवश्यकता नहीं है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 67 अन्य दस्तावेज़, जिन्हें कानून द्वारा सत्यापित किया जाना आवश्यक है, को संदर्भित करता है। यह दर्शाता है कि व्यक्ति के हस्ताक्षर पर दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर करने का आरोप है, अर्थात निष्पादन को हस्ताक्षर के साथ साक्ष्य द्वारा साबित किया जाना चाहिए निष्पादक होने का तात्पर्य उनकी लिखावट में है और दस्तावेज़ में अन्य मामले यानी इसके ढांचे को भी उस व्यक्ति की लिखावट से साबित करना चाहिये जिसने यह दस्तावेज़ लिखा है। तत्काल मामले में, समझौता प्रदर्श पी. 1 को प्रतिवादी संख्या 1 के निर्देश पर लिपिक-पीडब्लू. 1 के द्वारा लिखा गया था और दस्तावेज़ लिखने के बाद, उस पर प्रतिवादी नं. 1द्वारा हस्ताक्षर किए गए थे। इसलिए, तत्काल मामला में दस्तावेज़ प्रदर्श पी. 1 के निष्पादन को साबित करने के लिए वादी द्वारा जो साबित करने की आवश्यकता थी वह यह था कि इसमें प्रतिवादी नं. 1 के हस्ताक्षर हैं।

14. समझौते के निष्पादन के मुद्दे पर, न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि तीनों गवाहों के लगातार सबूत हैं कि समझौते को पहला प्रतिवादी द्वारा निष्पादित किया गया था। तदनुसार, अपील को अनुमति दी गई और निचली अदालत के फैसले को दरकिनार कर दिया गया।

15. इसलिए, प्रतिवादी सं 1 के कानूनी प्रतिनिधि द्वारा विशेष अनुमति द्वारा यह अपील।

16. श्री के. राममूर्ति, अपीलार्थी के लिए उपस्थित वरिष्ठ अधिवक्ता, ने उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित निर्णय पर हमला करते हुए कहा कि यह कानून में त्रुटिपूर्ण है और यह साक्ष्य के गंभीर रूप से गलत मूल्यांकन से ग्रस्त है। विद्वान सलाहकार ने, सबसे पहले प्रस्तुत किया कि, विचारण न्यायालय द्वारा बनाए गए मुद्दे संख्या6 ((क) 6 (ग) तक निष्पादन कार्यवाही और विविध कार्यवाही में पारित आदेशों की वैधता और प्रभाव से संबंधित है। ट्रायल कोर्ट ने इस निष्कर्ष को दर्ज किया कि निष्पादन मामला नं. 216 1961 में में डिक्री के निष्पादन में प्रतिवादी-अपीलार्थी को अधिकार में रखा गया था और इसमें वादी-प्रतिवादी द्वारा उठायी गई आपत्ति को अस्वीकार कर दिया गया था। उत्तरदाताओं द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष अपील में मुद्दा संख्या 6 (ए) से 6 (सी) के ये निष्कर्ष को चुनौती नहीं दी गई। इसके अलावा, उच्च न्यायालय ने माना कि मुद्दे के निष्कर्ष नं. 6 (a) से 6 (c) तक किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। ऐसा मानते हुए, उच्च न्यायालय को अपील की अनुमति नहीं देनी चाहिए थी और सूट फैसला सुनाया जाना चाहिए था। श्री राममूर्ति, विद्वान वरिष्ठ वकील ने प्रस्तुत किया कि हालाँकि, प्रतिवादी-अपीलार्थी ने समझौते का अस्तित्व से इनकार किया और विवाद किया, लेकिन उच्च न्यायालय ने, आपराधिक कार्यवाही में दर्ज साक्ष्य के आधार पर मुकदमे का विशिष्ट

निष्पादन के लिए फैसला किया। इसलिए, विद्वान वरिष्ठ वकील ने, इस प्रकार, प्रस्तुत किया कि, कथित समझौते दिनांक 02.09.1967 में, 29.11.1965 दिनांकित पूर्व समझौते का एक संदर्भ है, लेकिन इसे न तो पेश किया गया और न ही मामले में साबित किया गया जो स्वयं वादी को डिक्री के विशिष्ट निष्पादन की मांग करने से अयोग्य ठहराने के लिए पर्याप्त है। हालाँकि, विचाराधीन कथित समझौते को बिना किसी डाक टिकट के कागज की एक चौथाई शीट पर निष्पादित किया गया था, लेकिन उच्च न्यायालय ने गलती से आपराधिक मामले में दिए गए साक्ष्य के आधार पर उक्त समझौते पर भरोसा किया है। विद्वान वरिष्ठ वकील ने आगे कहा कि उच्च न्यायालय ने साक्ष्य अधिनियम की धारा 13 के प्रावधानों को लागू करने में कानून की गंभीर त्रुटि की है। विद्वान वरिष्ठ वकील ने न्यायालय द्वारा पारित ढेरों निर्नयों पर भरोसा किया **अनिल बिहारी बनाम लतिका बाला डस्सी और अन्य**, ए.आई.आर. 1955 एससी 566; **आदि फिरोजशाह बनाम एच. एम. सीरवई**, एआईआर 1971 एससी 385; **शांति कुमार पांडा बनाम शकुंतला देवी**, (2004) 1 एस. सी. सी. 438 और **बिहार राज्य बनाम राधा कृष्ण सिंह और अन्य** (1983) 3 एससीसी 118।

17. दूसरी ओर, श्री बसव प्रभु एस. पाटिल, विद्वान वरिष्ठ वकील उत्तरदाताओं की ओर से उपस्थित होकर प्रस्तुत किया गया कि एकमात्र मुद्दा जिसका निर्णय उच्च न्यायालय द्वारा किया जाना था यह था कि क्या प्रतिवादियों -अपीलार्थी कोई बाध्यकारी समझौता किया गया था। विद्वान

वरिष्ठ वकील ने प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय ने लेखक और अन्य गवाहों का के साक्ष्य पर विचार करने के बाद और आपराधिक कार्यवाही में प्रस्तुत साक्ष्य और उक्त कार्यवाही में अभिलिखित निष्कर्ष पर भी विचार करने के बाद यह सही निष्कर्ष निकाला है कि समझौता प्रतिवादियों द्वारा निष्पादित किया गया था। उच्च न्यायालय ने आगे यह निष्कर्ष निकाला कि प्रतिवादियों के लिए प्रतिफल राशि साबित हो गई है और यह कि समझौते पर हस्ताक्षर नंजप्पा, द्वारा स्वीकार किए गए थे जो समझौते का हस्ताक्षरकर्ता था। विद्वान वरिष्ठ वकील के अनुसार, उच्च न्यायालय द्वारा दर्ज किया गया निष्कर्ष साक्ष्य की सराहना पर आधारित है और इसलिए, तथ्य के निष्कर्ष में इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

18. इससे पहले कि हम विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों द्वारा एक विशिष्ट प्रदर्शन के लिए पारित डिक्री पर अभिलिखित निष्कर्षों पर अपने विचार व्यक्त करें, हम इस संबंध में कानून का तय प्रस्ताव पर पहले चर्चा करना चाहेंगे।

19. इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि विशेष प्रदर्शन के लिए एक डिक्री को मौखिक अनुबंध के आधार पर भी प्रदान किया जा सकता है। लॉर्ड डू पार्क (ए. आई. आर. 1946 प्रिवी काउंसिल) ने एक मामले में कहा, जबकि विशिष्ट निष्पादन के लिए एक फरमान निर्धारित करते समय एक मौखिक अनुबंध वैध, बाध्यकारी और लागू करने योग्य है। मौखिक

समझौते के आधार पर विशिष्ट निष्पादन के लिए एक डिक्री को पारित किया जा सकता है।कोइलीपारा श्रीरामुलु बनाम टी. अश्वथा नारायण, ए. आई. आर. 1968 एस. सी. 1028 के मामले में इस न्यायालय द्वारा प्रिवी काउंसिल का पालन किया गया था, और अभिनिर्धारित किया कि भविष्य के औपचारिक के संदर्भ में एक मौखिक समझौता अनुबंध पक्षों के बीच बाध्यकारी सौदेबाजी को नहीं रोकेगा।

20. हालांकि, एक मामले में जहां वादी एक मौखिक समझौता या लिखित अनुबंध के आधार पर अचल संपत्ति की बिक्री के लिए अनुबंध के विशिष्ट निष्पादन के लिए एक डिक्री की मांग करने के लिये आगे आता है, तो परिवादी पर यह सिद्ध करने के लिये एक बहुत भारा बोझ आ जाता है कि अचल संपत्ति की बिक्री के लिएसम्पन्न समझौते पर पक्षों के बीच सर्वसम्मति थी। क्या इस तरह के एक निष्कर्षित अनुबंध था या नहीं यह एक तथ्य का सवाल होगा जो प्रत्येक व्यक्तिगत मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में निर्धारित किया जाता है।यह वादी द्वारा स्थापित किया जाना चाहिए कि पक्षों के बीच अचल संपत्ति की बिक्री के लिए महत्वपूर्ण और मौलिक शर्तों का सम्पादन किया गया था।

21. एक मुकदमे में एक अनुबंध के विशिष्ट प्रदर्शन के लिए, न्यायालय कोविशिष्ट राहत अधिनियम की धारा 20 को ध्यान में रखना होगा। तथापि, न्यायालय विशिष्ट निष्पादन के लिए डिक्री देने के लिए

केवल इसलिये बाध्य नहीं है कि ऐसा करना विधिसम्मत है। न्यायिक विवेक को संरक्षित करता है। अदालत को मामले के सभी तथ्यों और परिस्थितियों पर सावधानीपूर्वक विचार करना चाहिए और यह देखना चाहिये कि इसका उपयोग न केवल वादी को बल्कि प्रतिवादी को भी अनुचित लाभ पहुँचाने के लिए उत्पीड़न के साधन के रूप में नहीं किया जाता है।

22. **सूर्य नारायण उपाध्याय बनाम राम रूप पांडे और अन्य, 1995 सप्लीमेंट (4) एस. सी. सी. 542** के मामले में विशिष्ट राहत अधिनियम की धारा 20 पर विचार करते हुए इस न्यायालय द्वारा निम्नानुसार यह अभिनिर्धारित किया गया कि:

> " 4. यद्यपि विशिष्ट निष्पादन के लिए डिक्री विवेकाधीन शक्ति एक है, फिर भी न्यायालय ऐसी राहत प्रदान करने के लिए केवल इसलिए बाध्य नहीं है कि ऐसा करना वैध है; लेकिन न्यायालय का विवेकाधिकार मनमाना नहीं है, बल्कि सही और है, जो कि कानून के न्यायिक सिद्धांतों द्वारा निर्देशित है और अपील न्यायालय द्वारा सुधार करने योग्य है। इसलिए, अधिनियम की धारा 20 में परिकल्पित कानून के स्थापित सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए विवेक का उचित रूप से उपयोग किया जाना चाहिए। यह मामला

दर्शाता है कि उच्च न्यायालय द्वारा विशिष्ट निष्पादन के लिए डिक्री प्रदान करने से मना करने लिए अप्रासंगिक विचार ध्यान में रखा गया था। इसने विचारण न्यायालय और प्रथम अपीलार्थी न्यायालय द्वारा अभिलिखित तथ्यों के समवर्ती निष्कर्ष को उलटने में प्रकट अवैधता कारित की है अर्थात् अपीलार्थी हमेशा अनुबंध के अपने हिस्से का पालन करने के लिए तैयार और इच्छुक थे।"

23. यह समान रूप से अच्छी तरह से तय किया गया है कि विशिष्ट निष्पादन की राहत विवेकाधीन है लेकिन मनमाना नहीं है, इसलिए विवेकाधिकार का गम्भीर और उचित रूप से न्यायिक सिद्धांत के अनुसार प्रयोग किया जाना चाहिए। अदालतों को मार्गदर्शन प्रदान करने वाले मामले एक या दूसरे तरीके से केवल उदाहरणात्मक है उनका उद्देश्य संपूर्ण होना नहीं है; इंग्लैंड में, विशिष्ट निष्पादन के लिये राहत का हिस्सा इक्विटी के क्षेत्र से संबंधित है, लेकिन भारत में विवेकाधिकार का प्रयोग वैधानिक प्रावधान द्वारा नियंत्रित किया जाता है।

24. मायवंती बनाम कौशल्या देवी (1990) 3 एस. सी. सी. 1के मामले में, इस न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी कीः

"8. विशिष्ट निष्पादन के मामले में यह तय किया गया कानून है, और वास्तव में इस पर संदेह नहीं किया जा

सकता है कि एक अनुबंध के विशिष्ट प्रदर्शन के आदेश का अधिकार क्षेत्र एक वैध और लागू करने योग्य अनुबंध का अस्तित्व पर आधारित है। अनुबंध अधिनियम अनुबंध की स्वतंत्रता के आदर्श पर आधारित है और यह सीमित सिद्धांत प्रदान करता है जिसके भीतरपार्टियाँ अपने स्वयं के अनुबंध करने के लिए स्वतंत्र हैं। जहाँ वैध और लागू करने योग्य अनुबंध नहीं किया गया है, अदालत उनके लिए कोई अनुबंध नहीं करेगी। विशिष्ट निष्पादन का आदेश नहीं दिया जायगागा यदि स्वयं कुछ ऐसे दोष से ग्रस्त है जो अनुबंध को अमान्य या अप्रवर्तनीय बनाता है। यद्यपि अनुबंध अन्यथा वैध है और प्रवर्तनीय है तो भी अदालत के पास विवेकाधिकार होगा और यह अनुबंध का कोई उल्लंघन होने से पहले भी एक विशिष्ट निष्पादन की डिक्री पारित कर सकता है। इसलिए, पहले यह देखना आवश्यक है कि क्या एक वैध और लागू करने योग्य अनुबंध हुआ है और फिर इससे उत्पन्न होने वाली प्रकृति और दायित्व को देखना है। अनुबंध दायित्व का आधार होने के नाते, विशिष्ट निष्पादन आदेश उस दायित्व को लागू करने के लिये है।"

25. के. प्रकाश बनाम बी. आर. संपत नार, (2015) 1 एस. सी. सी. 597 के मामले में, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित कियाः

"13. निर्विवाद रूप से, विशिष्ट प्रदर्शन के लिए उपचार एक न्यायसंगत उपचार है। अदालत विशिष्ट प्रदर्शन के लिये राहत देते हुए विवेकाधीन अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करती है। अधिनियम की धारा 20 विशेष रूप से प्रदान करती है कि न्यायालय का विशिष्ट निष्पादन की डिक्री देने का अधिकार क्षेत्र विवेकाधीन लेकिन मनमाना नहीं है। विवेक का सही और उचित न्यायिक सिद्धांत के अनुसार प्रयोग होना चाहिए।

14. रूके के मामले में किंग्सकी पीठ ने कहाः" विवेक एक विज्ञान है, जो पुरुषों की इच्छा और निजी स्नेह के लिए मनमाने ढंग से कार्य करने के लिये नहीं है। तो विवेकाधिकार जो यहाँ प्रयोग किया जाता है, कानून के नियमों और समता द्वारा शासित किया जाना है, जो विरोध करने के लिए नहीं है, लेकिन प्रत्येक, अपनी बारी में, दूसरे के अधीन रहें। यह विवेक, कुछ मामलों में कानून का अंतर्निहित रूप से पालन करता है, दूसरों में, इसकी कठोरता को दर्शाता है, लेकिन किसी भी मामले में यह आधारों या उसके सिद्धांत का खंडन या उलट नहीं करता है, जैसा कि कभी-कभी इस न्यायालय में आरोपित किया गया है। वह एक विवेकाधीन शक्ति है, जो न तो यह और न ही कोई अन्य अदालत, यहाँ तक कि न ही उच्चतम, जिसे संविधान

द्वारा न्यायिक क्षमता में कार्य करने का दायित्व दिया गया है, ऐसा कर सकता है।"

15. चांसरी न्यायालय ने अटॉर्नी जनरल बनाम व्हीट में रूके के मामले का पालन किया और देखाः (ई. आर पी. 666)

"...... कानून स्पष्ट है और न्यायसंगत संपदाओं के स्वामित्व से संबंधित उनके निर्णयों में न्यायपालिका की अदालतों को इसका पालन करना चाहिए; अन्यथा बड़ी अनिश्चितता और भ्रम पैदा होगा। और हालांकि इक्विटी में कार्यवाही को सैकंडम डिस्क्रैस्नम बोनि वीरी कहा जाता है फिर भी, जब यह पूछा जाता है, कि वीरीबोनस एस्ट क्विस क्या है? इसका उत्तर है क्वि कंसल्टा पैट्रम क्वि लेग्स जराक सल्वट। और रुके के मामला में यह कहा जाता है कि, यह कि विवेकाधिकार एक विज्ञान है जो पुरुषों की इच्छा और निजी स्नेह के अनुसार मनमाने ढंग से कार्य नहीं करता है ; तो विवेकाधिकार जिसे यहाँ निष्पादित किया जाना है, कानून और समानता के नियमों द्वारा नियंत्रित किया जाना है, जिनका विरोध नहीं करना है, लेकिन प्रत्येक अपनी बारी में दूसरे के अधीन होने के लिए है। यह विवेकाधिकार, कुछ मामलों में निहित रूप से कानून का

पालन करता है; अन्य में सहायता करता हैं, और उपचार को आगे बढ़ाते हैं; फिर से, यह दुरुपयोग के खिलाफ राहत देता है, या कठोरता को कम करता है; लेकिन किसी भी मामले में यह विरोधाभास या उलट नहीं करता है जैसा कि इस न्यायालय पर अज्ञानता से आरोपित किया गया। वह एक विवेकाधीन शक्ति है, जो न तो यह और न ही कोई अन्य अदालत, यहाँ तक कि न ही उच्चतम, जिसे संविधान द्वारा न्यायिक क्षमता में कार्य करने का दायित्व दिया गया है, ऐसा कर सकता है। यह विवेकाधिकार पूर्ण और न्यायपूर्ण है, और जो प्रत्येक न्यायाधीश मन में छापना चाहिए।"

"16. जिस सिद्धांत का प्रतिपादन किया जा सकता है वह यह है कि जहाँ वादी विशिष्ट निष्पादन के लिए एक मुकदमा लाता है; कानून विशिष्ट प्रदर्शन के लिए डिक्री के अनुदान के लिए पूर्ववर्ती शर्त पर जोर देता है, कि वादी को अनुबंध में इसकी शर्तों के अनुसार अनुबंध की तारीख से सुनवाई की तारीख तक अपने हिस्से का प्रदर्शन करने की तैयारी और इच्छा को जारी रखना होगा। आम तौर पर, जब विचारण न्यायालय अभिलेख पर उपलब्ध संपूर्ण साक्ष्य और सामग्रियों की सराहना के बाद एक या दूसरे तरीके से अपने

विवेकाधिकार का प्रयोग करता है, तो अपीलीय न्यायालय को तब तक हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए जब तक कि वह स्थापित किया कि विवेकाधिकार का प्रयोग विपरीत रूप से, मनमाने ढंग से या न्यायिक सिद्धांतों के खिलाफ किया गया है। अपीलीय न्यायालय को भी बाह्य विचार या सहानुभूतिपूर्ण विचार पर विशिष्ट प्रदर्शन के अनुदान के विरुद्ध अपने विवेक का प्रयोग नहीं करना चाहिए। यह सच है,जैसा कि विशिष्ट राहत अधिनियम की धारा 20 के तहत सोचा गया है कि एक पक्ष विशिष्ट निष्पादन के लिए एक डिक्री प्राप्त करने का हकदार नहीं है केवल इसलिए कि ऐसा करना विधिसम्मत है। फिर भी एक बार बेचने का समझौता कानूनी और वैध रूप से सिद्ध हो जाता है और ऐसी डिक्री प्राप्त करने के लिए और आगे की स्थापित की जाती है तो अदालत को प्रयोग करना पड़ता है विशिष्ट निष्पादन के लिए राहत देने के पक्ष में इसका विवेकाधिकार का प्रयोग करना पडता ह"

26. इस न्यायालय द्वारा **जरीना सिद्दीकी बनाम ए. रामलिंगम, 2015 (1) एससीसी 705** के मामले में भी संदर्भ दिया जा सकता है, इस न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी कीः

"33. विशिष्ट प्रदर्शन के लिए राहत देने या न देने का न्यायसंगत विवेकाधिकार भी इस बात पर निर्भर करती है कि दलों का आचरण कैसा है। वादी आवश्यक सामग्री को सिद्ध और स्थापित करना चाहिये ताकि विवेक का उपयोग वादी के पक्ष में विवेकपूर्ण तरीके से किया जा सके। उसी समय, यदि प्रतिवादी साफ हाथों से नहीं आता है और भौतिक तथ्यों और सबूतों को दबाता है और न्यायालय को गुमराह करता है तो इस प्रकार के विवेकाधिकार का प्रयोग विशिष्ट निष्पादन अनुदान देने से इनकार करके नहीं किया जाना चाहिए"।

27. यहाँ ऊपर उल्लिखित निर्णयों की संख्या में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित सिद्धांतों के आलोक में, हमें इस बात पर विचार करना होगा कि क्या उच्च न्यायालय द्वारा लिया गया निर्णय कानून में बनाए रखा जा सकता है।

28. तत्काल मामले में इस मुद्दे पर निर्णय लेते समय कि क्या प्रतिवादी द्वारा कथित रूप से निष्पादित 1967 का समझौता, लागू किया जा सकता है, अदालत को कथित समझौते को निष्पादित करनेसे पहले विभिन्न विसंगतियाँ और कानूनी कार्यवाही की श्रृंखला पर विचार करना पड़ा। दिनांकित 2.9.1967 केसमझौते में, दिनांकित 29.11.1965 से पूर्व

समझौते का संदर्भ है जहाँ प्रतिवादी-अपीलार्थी को 18,000 / रुपये से कम के लिए भुगतान किया गया जिसे अस्वीकार और विवादित किया गया था। दिलचस्प है कि 29.11.1965 दिनांकित समझौता वादी के मामले को साबित करने के लिए न तो दायर किया गया था और न ही प्रदर्शित किया गया। इतना पर्याप्त है उच्च न्यायालय ने कागज की एक चौथाई शीट में लिखे दिनांक 2.9.1967 के समझौते पर भरोसा केवल इस तथ्य के कारण किया कि कागज की उक्त चौथाई शीट एक आपराधिक कार्यवाही में मजिस्ट्रेट के सामने पेश की गई थी। हमारे विचार में, उच्च न्यायालय यह मानते हुए सही नहीं है कि दस्तावेज़ के निष्पादन पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है, हालांकि इसे कागज का एक चौथाई शीट पर निष्पादित किया गया था, और पत्र एक उचित डाक टिकट पर नहीं था और एक छोटे अक्षर में भी लिखा गया। उच्च न्यायालय ने भी निर्णय लेने में खुद को गलत तरीके से निर्देशित किया कि दस्तावेज़ के निष्पादन के संबंध में वादी को एक विशेषज्ञ की राय माँगने की कोई आवश्यकता नहीं थी।

29. निर्विवाद रूप से, निष्पादन मामले सहित पूर्ववर्ती कार्यवाहियों के आदेश पत्रक सहित विभिन्न दस्तावेज मुकदमा संपत्ति के कब्जे के संबंध में वादी के दावे को रद्द करने के लिए दायर किये गये थे लेकिन इन दस्तावेजों पर उच्च न्यायालय द्वारा विचार नहीं किया गया है। हमारी सुविचारित राय में आपराधिक कार्यवाही में आपराधिक न्यायालय द्वारा दर्ज किये गये सबूत और निष्कर्ष किसी भी तथ्य के अस्तित्व का निर्णायक

प्रमाण नहीं हो सकते है, विशेष रूप से, का सिविल न्यायालय द्वारा अभिलिखित स्वतंत्र निष्कर्ष के बिना विशिष्ट प्रदर्शन के लिए डिक्री प्रदान करने के लिए समझौते का अस्तित्व।

30. मामले के सभी तथ्यों और अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य की जांच करने के बाद, हमारी निश्चित राय है कि यह एक उपयुक्त मामला नहीं है जहां वादी- उत्तरदाता के पक्ष विशिष्ट प्रदर्शन के लिए विवेकाधीन राहत का दिया जाना है। विवादित फैसले में उच्च न्यायालय विशिष्ट राहत अधिनियम की धारा 20 के दायरे और इस न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून पर विचार करने में विफल रहा है।

31. इन सभी कारणों से, इस अपील की अनुमति है और उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित निर्णय को दरकिनार कर दिया जाता है। नतीजतन, विद्वत विचारण न्यायालय के फैसले को बहाल किया जाता है। अतः मुकदमा खारिज किया जा सकता है।

देविका गुजराल

अपील की अनुमति दी गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक बृजेश कुमार, अधिवक्ता उच्च न्यायालय द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।